अध्याय 9: राजविद्याराजगुह्ययोग

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **9.1**

> श्रीभगवानुवाच
>
> इदं तु ते गुह्यतमं प्रवक्ष्याम्यनसूयवे |
>
> ज्ञानं विज्ञानसहितं यज्ज्ञात्वा मोक्ष्यसेऽशुभात् || **1** ||

हिन्दी अनुवाद:
श्रीभगवान बोले—हे अर्जुन! चूँकि तू दोषदृष्टि रहित (असूया रहित) है, इसलिए मैं तुझे यह अत्यंत गोपनीय 'विज्ञान सहित ज्ञान' कहूँगा, जिसे जानकर तू संसार रूपी अशुभ (दुखों) से मुक्त हो जाएगा।

सरल व्याख्या:
भगवान कहते हैं कि जिसके मन में गुरु या ईश्वर के प्रति ईर्ष्या या दोष देखने की वृत्ति नहीं होती, वही इस परम रहस्य का अधिकारी है। यहाँ 'ज्ञान' का अर्थ है परमात्मा का अनुभव और 'विज्ञान' का अर्थ है उस अनुभव को जीवन के हर पक्ष में उतारना। इसे जानने के बाद मनुष्य जन्म-मरण के कष्टों से सदा के लिए छूट जाता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... पात्रता का पहला लक्षण दोषदृष्टि का अभाव है, तभी परमात्मा का गूढ़तम रहस्य प्रकट होता है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **9.2**

> राजविद्या राजगुह्यं पवित्रमिदमुत्तमम् |
>
> प्रत्यक्षावगमं धर्म्यं सुसुखं कर्तुमव्ययम् || **2** ||

हिन्दी अनुवाद:
यह विद्या सब विद्याओं का राजा है, सब गोपनीयों का भी गोपनीय है, परम पवित्र है, उत्तम है, प्रत्यक्ष फल देने वाली है, धर्मयुक्त है, करने में अत्यंत सुखद और अविनाशी है।

सरल व्याख्या:
भगवान इस ज्ञान की महिमा गाते हुए कहते हैं कि यह 'राजविद्या' है—अर्थात श्रेष्ठों की विद्या। यह इतनी पवित्र है कि क्षण भर में पापों को भस्म कर देती है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसका अनुभव 'प्रत्यक्ष' होता है (जैसे भोजन करने वाले को तृप्ति स्वयं अनुभव होती है) और इस मार्ग पर चलना बोझ नहीं, बल्कि परम सुखद है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... अध्यात्म का मार्ग कोई कठिन या नीरस प्रक्रिया नहीं, बल्कि आनंददायक और सीधा अनुभव देने वाला विज्ञान है।

श्लोक संख्या: **9.3**

> अश्रद्दधानाः पुरुषा धर्मस्यास्य परन्तप |
>
> अप्राप्य मां निवर्तन्ते मृत्युसंसारवर्मनि || **3** ||

हिन्दी अनुवाद:
हे परंतप! इस धर्म (परमात्म प्राप्ति के मार्ग) पर श्रद्धा न रखने वाले मनुष्य मुझे प्राप्त न होकर, मृत्यु रूपी संसार चक्र के मार्ग में ही भटकते रहते हैं।

सरल व्याख्या:
श्रद्धा वह बीज है जिसके बिना ज्ञान का वृक्ष नहीं उगता। भगवान स्पष्ट कहते हैं कि जो इस ईश्वरीय मार्ग पर विश्वास नहीं करते, वे बार-बार जन्म लेते हैं और मरते हैं। वे उस परम पद को चूक जाते हैं जो उनका अपना स्वरूप है, और माया के चक्कर में फंसे रहते हैं।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... श्रद्धा के अभाव में मनुष्य हाथ आए पारसमणि **(**परमात्मा**)** को खोकर पुनः दुखों के सागर में गिर जाता है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **9.4**

> मया ततमिदं सर्वं जगदव्यक्तमूर्तिना |
>
> मत्स्थानि सर्वभूतानि न चाहं तेष्ववस्थितः || **4** ||

हिन्दी अनुवाद:
मुझ निराकार परमात्मा से यह संपूर्ण जगत व्याप्त है। समस्त प्राणी मुझमें स्थित हैं, किंतु मैं उनमें स्थित नहीं हूँ।

सरल व्याख्या:
यहाँ भगवान अपनी सर्वव्यापकता का रहस्य समझा रहे हैं। जैसे बर्फ जल में ही बनी है और जल में ही स्थित है, वैसे ही पूरा जगत ईश्वर में है। किंतु ईश्वर संसार की सीमाओं में बँधा नहीं है। वह संसार को सहारा तो देता है, पर संसार के दोषों से अछूता (असंग) रहता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... ईश्वर ही इस जगत का आधार है**,** वह सर्वत्र व्याप्त होते हुए भी संसार से ऊपर और स्वतंत्र है।

श्लोक संख्या: **9.5**

> न च मत्स्थानि भूतानि पश्य मे योगमैश्वरम् |
>
> भूतभृन्न च भूतस्थो ममात्मा भूतभावनः || **5** ||

हिन्दी अनुवाद:
और वे सब भूत (प्राणी) मुझमें स्थित नहीं हैं; मेरे इस ईश्वरीय योग की शक्ति को देख! मैं भूतों का धारण-पोषण करने वाला और उन्हें उत्पन्न करने वाला होकर भी स्वयं उन भूतों में स्थित नहीं हूँ।

सरल व्याख्या:
यह श्लोक पहले वाले श्लोक का गहरा विरोधाभास लगता है, पर यह 'ऐश्वर्य योग' है। जैसे आकाश में बादल दिखते हैं, पर बादल हटने पर आकाश ज्यों का त्यों रहता है (बादल आकाश को छू नहीं पाते), वैसे ही संसार परमात्मा की माया का खेल है। वह सबको पालने वाला है, पर उसे कोई विकार छू नहीं सकता।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... परमात्मा जगत का कारण और पालनकर्ता होकर भी पूर्णतः निर्लेप और अलिप्त रहता है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **9.6**

> यथाकाशस्थितो नित्यं वायुः सर्वत्रगो महान् |
>
> तथा सर्वाणि भूतानि मत्स्थानीत्युपधारय || **6** ||

हिन्दी अनुवाद:
जैसे सब जगह विचरने वाली महान वायु सदैव आकाश में ही स्थित रहती है, वैसे ही समझ कि समस्त प्राणी मुझमें ही स्थित हैं।

सरल व्याख्या:
भगवान ने यहाँ एक सुंदर उदाहरण दिया है। वायु बहुत शक्तिशाली है और हर जगह चलती है, पर उसका आधार हमेशा 'आकाश' ही रहता है। बिना आकाश के वायु टिक नहीं सकती। वैसे ही यह संसार और हम सब परमात्मा रूपी आकाश में स्थित हैं, पर परमात्मा हम सबसे निराला और विशाल है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... हमारी सत्ता ईश्वर के बिना संभव नहीं है, जैसे वायु की सत्ता आकाश के बिना संभव नहीं।

श्लोक संख्या: **9.7**

> सर्वभूतानि कौन्तेय प्रकृतिं यान्ति मामिकाम् |
>
> कल्पक्षये पुनस्तानि कल्पादो विसृजाम्यहम् || **7** ||

हिन्दी अनुवाद:
हे कुन्तीपुत्र! कल्प के अंत में समस्त प्राणी मेरी प्रकृति (मूल कारण) को प्राप्त होते हैं और कल्प के आदि में मैं उन्हें फिर से उत्पन्न करता हूँ।

सरल व्याख्या:
सृष्टि का चक्र चलता रहता है। प्रलय आने पर सब कुछ ईश्वर की शक्ति (प्रकृति) में सिमट जाता है, जैसे बीज में पूरा पेड़ समा जाता है। और जब सृजन का समय आता है, तो वही बीज (संस्कारों के अनुसार) फिर से अंकुरित होकर जीव रूप में प्रकट हो जाता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... जन्म और प्रलय परमात्मा की प्रकृति के चक्र मात्र हैं, जिसमें आत्माएं अपने कर्मों के अनुसार आती-जाती रहती हैं।

श्लोक संख्या: **9.8**

> प्रकृतिं स्वामवष्टभ्य विसृजामि पुनः पुनः |
>
> भूतग्राममिमं कृत्स्नमवशं प्रकृतेर्वशात् || **8** ||

हिन्दी अनुवाद:
अपनी प्रकृति को स्वीकार करके, मैं स्वभाव के वश में हुए इस संपूर्ण प्राणी-समुदाय को उनके कर्मों के अनुसार बार-बार रचता हूँ।

सरल व्याख्या:
यहाँ भगवान 'अवशम्' (विवश) शब्द का प्रयोग करते हैं। जीव अपनी प्रकृति, आदतों और पुराने कर्मों के वश में है। भगवान केवल अपनी शक्ति से उन्हें प्रकट कर देते हैं, पर जीव अपने स्वभाव के कारण ही बार-बार जन्म लेने को मजबूर होता है। यह सब प्रकृति के नियमों के तहत स्वचालित रूप से होता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... जीव अपने स्वभाव और कर्मों के कारण जन्म लेने के लिए विवश है, ईश्वर तो केवल सत्ता प्रदान करता है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **9.9**

> न च मां तानि कर्माणि निबध्नन्ति धनञ्जय |
>
> उदासीनवदासीनमसक्तं तेषु कर्मसु || **9** ||

हिन्दी अनुवाद:
हे धनंजय! उन कर्मों में आसक्ति न होने के कारण और उदासीन (तटस्थ) की तरह स्थित रहने के कारण, वे कर्म मुझे नहीं बाँधते।

सरल व्याख्या:
सृष्टि की इतनी बड़ी रचना और विनाश करने के बाद भी भगवान कर्मों के बंधन में नहीं फँसते। क्यों? क्योंकि वे इसे 'उदासीन' (जैसे कोई नाटक देख रहा हो) भाव से करते हैं। उन्हें न फल की इच्छा है, न अहंकार। यह मनुष्य के लिए भी एक सीख है—अनासक्त रहकर कर्म करने से बंधन नहीं होता।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... कर्म नहीं, बल्कि कर्तापन का भाव और आसक्ति ही मनुष्य को बाँधती है; परमात्मा इन दोनों से मुक्त है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **9.10**

> मयाध्यक्षेण प्रकृतिः सूयते सचराचरम् |
>
> हेतुनानेन कौन्तेय जगद्विपरिवर्तते || **10** ||

हिन्दी अनुवाद:
हे कौन्तेय! मेरी अध्यक्षता (देखरेख) में प्रकृति ही इस चर-अचर सहित संपूर्ण जगत को रचती है। इसी कारण से यह संसार-चक्र घूम रहा है।

सरल व्याख्या:
भगवान यहाँ स्पष्ट करते हैं कि वे स्वयं हाथ से कुछ नहीं बनाते। उनकी केवल 'उपस्थिति' मात्र से प्रकृति सक्रिय हो जाती है। जैसे सूर्य के उदय होने मात्र से फूल खिलने लगते हैं और लोग काम पर लग जाते हैं (सूर्य कुछ करता नहीं), वैसे ही परमात्मा की अध्यक्षता में प्रकृति सृष्टि का कार्य करती है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... परमात्मा परम सत्ता है जिसकी देखरेख में प्रकृति ही समस्त ब्रह्मांड का संचालन करती है।

श्लोक संख्या: **9.11**

> अवजानन्ति मां मूढा मानुषीं तनुमाश्रितम् |
>
> परं भावमजानन्तो मम भूतमहेश्वरम् || **11** ||

हिन्दी अनुवाद:
मेरे परम भाव को (कि मैं संपूर्ण भूतों का महान ईश्वर हूँ) न जानने वाले मूर्ख लोग, मनुष्य का शरीर धारण करने वाले मुझ परमात्मा की अवज्ञा करते हैं।

सरल व्याख्या:
जब ईश्वर लोक कल्याण के लिए मानवीय रूप में आता है, तो अज्ञानी लोग उन्हें केवल एक साधारण मनुष्य समझ लेते हैं। वे उस अनंत शक्ति को नहीं देख पाते जो उस देह के भीतर छिपी है। जैसे कोई राख को देख कर उसके भीतर की छिपी अग्नि को भूल जाए, वैसे ही वे उनके 'महेश्वर' रूप को पहचान नहीं पाते।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... ईश्वर की पहचान बाहरी शरीर से नहीं, बल्कि उनके आंतरिक दिव्य भाव और तत्व से होती है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **9.12**

> मोघाशा मोघकर्माणो मोघज्ञाना विचेतसः |
>
> राक्षसीमासुरीं चैव प्रकृतिं मोहिनीं श्रिताः || **12** ||

हिन्दी अनुवाद:
जो लोग मोहनी प्रकृति (राक्षसी और आसुरी स्वभाव) के आश्रित हैं, उनकी आशाएं व्यर्थ हैं, उनके कर्म निष्फल हैं और उनका ज्ञान भी व्यर्थ (भ्रमित) है।

सरल व्याख्या:
जिनका स्वभाव आसुरी है (जो केवल भोग, स्वार्थ और अहंकार में जीते हैं), वे चाहे कितनी भी बड़ी योजनाएँ बना लें या पुण्य का ढोंग कर लें, अंत में उन्हें कुछ प्राप्त नहीं होता। उनकी बुद्धि भ्रमित रहती है और वे जीवन के असली लक्ष्य 'परमात्मा' से कोसों दूर भटक जाते हैं।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... परमात्मा से विमुख होकर किए गए सभी प्रयास और कामनाएं अंततः शून्य और निष्फल सिद्ध होती हैं।

श्लोक संख्या: **9.13**

> महात्मानस्तु मां पार्थ दैवीं प्रकृतिमाश्रिताः |
>
> भजन्त्यनन्यमनसो ज्ञात्वा भूतादिमव्ययम् || **13** ||

हिन्दी अनुवाद:
परंतु हे कुन्तीपुत्र! जो दैवी प्रकृति (दिव्य स्वभाव) के आश्रित महात्मा जन हैं, वे मुझे समस्त भूतों का आदि कारण और अविनाशी जानकर अनन्य मन से भजते हैं।

सरल व्याख्या:
आसुरी लोगों के विपरीत, जिनके हृदय में दया, सत्य और भक्ति है (महात्मा), वे जानते हैं कि परमात्मा ही इस जगत का मूल है। उनका मन इधर-उधर नहीं भटकता। वे पूरी निष्ठा के साथ ईश्वर में ही रमे रहते हैं क्योंकि उन्हें सत्य का बोध हो चुका है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... दैवी गुणों से संपन्न व्यक्ति ही परमात्मा के वास्तविक स्वरूप को पहचान कर उनमें लीन हो पाता है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **9.14**

> सततं कीर्तयन्तो मां यतन्तश्च दृढव्रताः |
>
> नमस्यन्तश्च मां भक्त्या नित्ययुक्ता उपासते || **14** ||

हिन्दी अनुवाद:
वे दृढ़ निश्चय वाले भक्त निरंतर मेरे नाम और गुणों का कीर्तन करते हुए, मेरी प्राप्ति के लिए यत्न करते हुए और मुझे बार-बार प्रणाम करते हुए निरंतर मुझसे जुड़कर मेरी उपासना करते हैं।

सरल व्याख्या:
सच्ची भक्ति केवल एकांत में बैठने का नाम नहीं है। महात्मा जन हर पल—उठते, बैठते, कर्म करते हुए—ईश्वर को याद रखते हैं। उनका संकल्प अटूट होता है और वे विनम्रता के साथ (प्रणाम करते हुए) अपनी साधना में लगे रहते हैं। 'नित्ययुक्त' होने का अर्थ है ईश्वर से कभी न टूटने वाला संबंध जोड़ना।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... निरंतर स्मरण और दृढ़ संकल्प ही परमात्मा को प्राप्त करने की मुख्य सीढ़ी है।

श्लोक संख्या: **9.15**

> ज्ञानयज्ञेन चाप्यन्ये यजन्तो मामुपासते |
>
> एकत्वेन पृथक्त्वेन बहुधा विश्वतोमुखम् || **15** ||

हिन्दी अनुवाद:
दूसरे कितने ही भक्त ज्ञानयज्ञ के द्वारा मुझ सर्वस्वरूप परमात्मा की उपासना करते हुए, मुझे एकत्व भाव से (अद्वैत), अलग-अलग भाव से (द्वैत) या अनेक रूपों में भजते हैं।

सरल व्याख्या:
भगवान यहाँ विभिन्न साधनाओं को मान्यता देते हैं। कुछ भक्त उन्हें स्वयं का ही स्वरूप (एकत्व) मानते हैं, कुछ स्वामी-सेवक का भाव रखते हैं, और कुछ उन्हें संसार के अनेक रूपों में (विश्वरूप) देखते हैं। भाव चाहे जो हो, यदि केंद्र में ईश्वर है, तो वह ज्ञानयज्ञ ही है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... उपासना की पद्धतियाँ अनेक हो सकती हैं, लेकिन उन सबका लक्ष्य एक ही 'परमात्मा' है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **9.16**

> अहं क्रतुरहं यज्ञः स्वधाहमहमौषधम् |
>
> मन्त्रोऽहमहमेवाज्यमहमग्निरहं हुतम् || **16** ||

हिन्दी अनुवाद:
क्रतु (वैदिक कर्म) मैं हूँ, यज्ञ मैं हूँ, स्वधा (पितरों को दिया जाने वाला अन्न) मैं हूँ, औषधि मैं हूँ, मन्त्र मैं हूँ, घी मैं हूँ, अग्नि मैं हूँ और हवन की क्रिया भी मैं ही हूँ।

सरल व्याख्या:
यहाँ भगवान अपनी सर्वव्यापकता को कर्मकांड के प्रतीकों से समझा रहे हैं। पूजा की सामग्री से लेकर पूजा करने वाले और पूजा की अग्नि तक, सब कुछ कृष्ण (ब्रह्म) का ही विस्तार है। कुछ भी उनसे अलग नहीं है। जहाँ साधक हर क्रिया में केवल परमात्मा को देखता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... धार्मिक अनुष्ठान की प्रत्येक वस्तु और क्रिया साक्षात परमात्मा का ही रूप है।

श्लोक संख्या: **9.17**

> पिताहमस्य जगतो माता धाता पितामहः |
>
> वेद्यं पवित्रमोंकार ऋक्साम यजुरेव च || **17** ||

हिन्दी अनुवाद:
इस संपूर्ण जगत का धाता (धारण करने वाला), पिता, माता, पितामह (दादा), जानने योग्य तत्व, पवित्र ओंकार तथा ऋग्वेद, सामवेद और यजुर्वेद भी मैं ही हूँ।

सरल व्याख्या:
संसार के सारे संबंध ईश्वर से ही निकले हैं। वह हमारा सृजनहार (पिता-माता) भी है और रक्षक (धाता) भी। ज्ञान के सभी मार्ग—चाहे वे वेद हों या पवित्र शब्द 'ॐ'—सब अंततः परमात्मा तक ही पहुँचाते हैं। वह आदि पुरुष है जिससे सब कुछ उत्पन्न हुआ है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... ईश्वर ही हमारा परम संबंधी है और समस्त ज्ञान का अंतिम सार भी वही है।

श्लोक संख्या: **9.18**

> गतिर्भर्ता प्रभुः साक्षी निवासः शरणं सुहृत् |
>
> प्रभवः प्रलयः स्थानं निधानं बीजमव्ययम् || **18** ||

हिन्दी अनुवाद:
मैं ही सबकी परम गति, भरण-पोषण करने वाला, स्वामी, साक्षी, निवास स्थान, शरण लेने योग्य, निस्वार्थ प्रेमी (मित्र), उत्पत्ति और प्रलय का आधार तथा अविनाशी बीज हूँ।

सरल व्याख्या:
भगवान कहते हैं कि जीव जहाँ पहुँचने की चेष्टा कर रहा है (गति), वह लक्ष्य मैं हूँ। मैं सब देख रहा हूँ (साक्षी) और सबका भला चाहने वाला मित्र हूँ। प्रलय के समय संसार जिसमें सिमट जाता है और जहाँ से दोबारा निकलता है, वह अविनाशी बीज भी मैं ही हूँ।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... जीवन के हर मोड़ पर, जन्म से लेकर मोक्ष तक, परमात्मा ही हमारा एकमात्र आधार और रक्षक है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **9.19**

> तपाम्यहमहं वर्षं निगृह्णाम्युत्सृजामि च |
>
> अमृतं चैव मृत्युश्च सदसच्चाहमर्जुन || **19** ||

हिन्दी अनुवाद:
हे अर्जुन! मैं ही सूर्य रूप में तपता हूँ, मैं ही वर्षा को रोकता हूँ और वर्षा करता हूँ; मैं ही अमृत और मृत्यु हूँ तथा सत् (विद्यमान) और असत् (अविद्यमान) भी मैं ही हूँ।

सरल व्याख्या:
प्रकृति की हर हलचल परमात्मा की शक्ति से है। धूप और बारिश उन्हीं के विधान हैं। इतना ही नहीं, जो 'सत्' (नित्य आत्मा) है और जो 'असत्' (नश्वर शरीर/माया) है, वह सब उन्हीं का प्रकाश है। यहाँ तक कि अमरता और मृत्यु भी उनके ही दो पक्ष हैं।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... सृजित और असृजित, दृश्य और अदृश्य—सृष्टि की हर परस्पर विरोधी अवस्था परमात्मा का ही विस्तार है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **9.20**

> त्रैविद्या मां सोमपाः पूतपापा यज्ञैरिष्ट्वा स्वर्गतिं प्रार्थयन्ते |
>
> ते पुण्यमासाद्य सुरेन्द्रलोकमश्नन्ति दिव्यान्दिवि देवभोगान् || **20** ||

हिन्दी अनुवाद:
तीनों वेदों में विधान किए हुए सकाम कर्मों को करने वाले, सोमरस पीने वाले और पापों से शुद्ध हुए पुरुष मुझे यज्ञों के द्वारा पूजकर स्वर्ग की प्रार्थना करते हैं। वे अपने पुण्यों के फलस्वरूप इन्द्रलोक को प्राप्त होकर स्वर्ग के दिव्य देवताओं के भोग भोगते हैं।

सरल व्याख्या:
यहाँ भगवान उन लोगों की चर्चा कर रहे हैं जो धार्मिक तो हैं, पर जिनकी नीयत 'स्वर्ग' के सुखों की है। वे शुद्ध हृदय से पुण्य करते हैं और उन्हें स्वर्ग भी मिलता है। पर यह 'अनन्य भक्ति' नहीं है। वे केवल सुखों का व्यापार कर रहे हैं। उन्हें दिव्य भोग तो मिलते हैं, पर स्थायी शांति (मोक्ष) नहीं मिलती।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... सकाम भक्ति से स्वर्ग के सुख तो मिल सकते हैं, लेकिन पुनर्जन्म का चक्र समाप्त नहीं होता।

श्लोक संख्या: **9.21**

> ते तं भुक्त्वा स्वर्गलोकं विशालं क्षीणे पुण्ये मर्त्यलोकं विशन्ति |
>
> एवं त्रयीधर्ममनुप्रपन्ना गतागतं कामकामा लभन्ते || **21** ||

हिन्दी अनुवाद:
वे उस विशाल स्वर्गलोक के सुखों को भोगकर, पुण्य क्षीण होने पर पुनः मृत्युलोक (संसार) में प्रवेश करते हैं। इस प्रकार, केवल वेदों में बताए गए सकाम कर्मों का आश्रय लेने वाले और भोगों की कामना करने वाले लोग बार-बार आने-जाने (जन्म-मरण) को प्राप्त होते हैं।

सरल व्याख्या:
स्वर्ग का सुख भी स्थायी नहीं है। यह वैसा ही है जैसे किसी होटल में रहने के लिए आपके पास जब तक धन (पुण्य) है, तब तक आप वहाँ रह सकते हैं, फिर वापस आना ही पड़ता है। जो लोग केवल स्वर्ग या सुख की इच्छा से शुभ कर्म करते हैं, वे मुक्ति नहीं पाते, बल्कि जन्म-मृत्यु के चक्र में ही घूमते रहते हैं।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... सांसारिक या स्वर्गीय सुखों की इच्छा करना जीवात्मा को बार-बार बंधन में डालता है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **9.22**

> अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते |
>
> तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् || **22** ||

हिन्दी अनुवाद:
जो अनन्य प्रेमी भक्त मेरा चिंतन करते हुए मुझ परमेश्वर को ही निष्काम भाव से भजते हैं, उन नित्य निरंतर मुझमें स्थित रहने वाले पुरुषों का 'योग-क्षेम' (योग = जो प्राप्त नहीं है उसे दिलाना, क्षेम = जो प्राप्त है उसकी रक्षा करना) मैं स्वयं वहन करता हूँ।

सरल व्याख्या:
यह गीता का सबसे बड़ा आश्वासन है। भगवान कहते हैं कि जो सब कुछ छोड़कर पूरी तरह मुझ पर आश्रित हो जाता है, उसकी हर जिम्मेदारी मेरी है। उसे अपनी जरूरतों की चिंता करने की आवश्यकता नहीं रहती; उसके आध्यात्मिक और भौतिक जीवन की व्यवस्था परमात्मा स्वयं करते हैं।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... पूर्ण समर्पण करने वाले भक्त की सुरक्षा और आवश्यकताओं का उत्तरदायित्व साक्षात ईश्वर का होता है।

श्लोक संख्या: **9.23**

> येऽप्यन्यदेवताभक्ता यजन्ते श्रद्धयान्विताः |
>
> तेऽपि मामेव कौन्तेय यजन्त्यविधिपूर्वकम् || **23** ||

हिन्दी अनुवाद:
हे कुन्तीपुत्र! जो भक्त श्रद्धा से युक्त होकर अन्य देवताओं को भजते हैं, वे भी वास्तव में मुझे ही भजते हैं, किंतु उनका वह पूजन 'अविधिपूर्वक' (अज्ञानवश) है।

सरल व्याख्या:
जैसे एक ही राजा के अलग-अलग विभागों के कर्मचारी होते हैं, वैसे ही अन्य देवी-देवता भी उसी एक परमात्मा की विभूतियाँ हैं। जो लोग उन्हें अलग मानकर पूजते हैं, उनका भाव तो मुझ तक पहुँचता है, पर वे सत्य को पूरी तरह नहीं जानते। वे मूल वृक्ष की जड़ में पानी देने के बजाय टहनियों को सींच रहे होते हैं।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... समस्त श्रद्धा का अंतिम लक्ष्य एक ही परमात्मा है, भले ही उसे अलग-अलग नामों से पुकारा जाए।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **9.24**

> अहं हि सर्वयज्ञानां भोक्ता च प्रभुरेव च |
>
> न तु मामभिजानन्ति तत्त्वेनातश्च्यवन्ति ते || **24** ||

हिन्दी अनुवाद:
क्योंकि समस्त यज्ञों का भोक्ता और स्वामी भी मैं ही हूँ; परंतु वे मुझे तत्व से (असली रूप में) नहीं जानते, इसीलिए वे गिरते हैं (अर्थात पुनर्जन्म को प्राप्त होते हैं)।

सरल व्याख्या:
संसार में की जाने वाली किसी भी प्रकार की उपासना का फल देने वाला और उसे स्वीकार करने वाला केवल परमात्मा है। जो लोग ईश्वर को केवल सीमाओं में बाँधकर देखते हैं और उनकी सर्वव्यापकता को नहीं समझते, वे सत्य से दूर रह जाते हैं और बार-बार संसार में भटकते रहते हैं।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... परमात्मा के वास्तविक स्वरूप का ज्ञान न होना ही मनुष्य के अधःपतन और पुनर्जन्म का कारण है।

श्लोक संख्या: **9.25**

> यान्ति देवव्रता देवान्पितॄन्यान्ति पितृव्रताः |
>
> भूतानि यान्ति भूतेज्या यान्ति मद्याजिनोऽपि माम् || **25** ||

हिन्दी अनुवाद:
देवताओं को पूजने वाले देवताओं को प्राप्त होते हैं, पितरों को पूजने वाले पितरों को प्राप्त होते हैं, भूतों को पूजने वाले भूतों को प्राप्त होते हैं और मुझको पूजने वाले भक्त मुझे ही प्राप्त होते हैं।

सरल व्याख्या:
इंसान जैसी श्रद्धा रखता है और जिसकी साधना करता है, वैसा ही बन जाता है और अंत में उसी स्थान पर पहुँचता है। यदि लक्ष्य छोटा है, तो परिणाम भी छोटा होगा। लेकिन यदि लक्ष्य साक्षात परमात्मा है, तो साधक को परमात्मा की ही प्राप्ति होती है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... हमारी गति हमारे लक्ष्य और श्रद्धा की दिशा पर निर्भर करती है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **9.26**

> पत्रं पुष्पं फलं तोयं यो मे भक्त्या प्रयच्छति |
>
> तदहं भक्त्युपहृतमश्नामि प्रयतात्मनः || **26** ||

हिन्दी अनुवाद:
जो कोई भक्त मेरे लिए प्रेम से एक पत्ता, एक फूल, एक फल या जल भी अर्पण करता है, उस शुद्ध बुद्धि वाले निष्काम भक्त का वह प्रेमपूर्वक भेंट किया हुआ उपहार मैं ग्रहण करता हूँ।

सरल व्याख्या:
परमात्मा को बड़ी-बड़ी वस्तुओं या धन-दौलत की आवश्यकता नहीं है। वे केवल भाव के भूखे हैं। यदि कोई बहुत गरीब भी हो और केवल श्रद्धा से जल का एक घूँट भी चढ़ा दे, तो भगवान उसे बड़े चाव से स्वीकार करते हैं। महत्वपूर्ण यह नहीं है कि 'क्या' चढ़ाया गया, बल्कि 'किस भाव से' चढ़ाया गया।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... ईश्वर की भक्ति में सरलता और प्रेम ही सबसे बड़ी सामग्री है।

श्लोक संख्या: **9.27**

> यत्करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासि यत् |
>
> यत्तपस्यसि कौन्तेय तत्कुरुष्व मदर्पणम् || **27** ||

हिन्दी अनुवाद:
हे कुन्तीपुत्र! तू जो भी कर्म करता है, जो खाता है, जो हवन करता है, जो दान देता है और जो भी तप करता है, वह सब मुझे अर्पण कर दे।

सरल व्याख्या:
भक्ति के लिए संसार छोड़ने की जरूरत नहीं है। भगवान कहते हैं कि तुम अपनी दिनचर्या के हर कार्य को पूजा बना दो। जो भी करो, यह सोचकर करो कि "यह प्रभु के लिए है"। जब कर्म ईश्वर को समर्पित हो जाता है, तो वह बंधन नहीं बनता, बल्कि मुक्ति का द्वार बन जाता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... हर कर्म को परमात्मा को समर्पित कर देना ही सर्वश्रेष्ठ योग है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **9.28**

> शुभाशुभफलैरेवं मोक्ष्यसे कर्मबन्धनैः |
>
> संन्यासयोगयुक्तात्मा विमुक्तो मामुपैष्यसि || **28** ||

हिन्दी अनुवाद:
इस प्रकार सब कुछ मुझे अर्पण करने से तू शुभ और अशुभ फल देने वाले कर्म-बन्धनों से मुक्त हो जाएगा। ऐसे संन्यास योग में स्थित हुआ तू मुक्त होकर मुझे ही प्राप्त होगा।

सरल व्याख्या:
जब हम कर्म के फल पर अपना अधिकार छोड़ देते हैं, तो कर्म के अच्छे या बुरे परिणाम हमें नहीं चिपकते। यह 'अर्पण' ही असली संन्यास है। ऐसी मानसिक स्थिति वाला व्यक्ति संसार में रहते हुए भी मुक्त है और अंततः परमात्मा में ही समा जाता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... समर्पण के माध्यम से कर्मों के बोझ से मुक्ति और परमात्मा की प्राप्ति संभव है।

श्लोक संख्या: **9.29**

> समोऽहं सर्वभूतेषु न मे द्वेष्योऽस्ति न प्रियः |
>
> ये भजन्ति तु मां भक्त्या मयि ते तेषु चाप्यहम् || **29** ||

हिन्दी अनुवाद:
मैं समस्त भूतों में समान रूप से व्यापक हूँ, न कोई मेरा अप्रिय है और न ही प्रिय; किंतु जो भक्त मुझे प्रेम से भजते हैं, वे मुझमें हैं और मैं उनमें (प्रकट) हूँ।

सरल व्याख्या:
परमात्मा सूरज की रोशनी की तरह हैं जो सबके लिए बराबर है। सूर्य किसी से भेदभाव नहीं करता, लेकिन जो खिड़की खोलता है, उजाला उसी के घर में होता है। वैसे ही, भगवान का किसी से बैर नहीं है, पर जो भक्ति करता है, उसके हृदय में परमात्मा का अनुभव विशेष रूप से होने लगता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... ईश्वर पक्षपाती नहीं हैं; भक्त और भगवान का संबंध केवल प्रेम और सघनता का है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **9.30**

> अपि चेत्सुदुराचारो भजते मामनन्यभाक् |
>
> साधुरेव स मन्तव्यः सम्यग्व्यवसितो हि सः || **30** ||

हिन्दी अनुवाद:
यदि कोई अत्यंत दुराचारी भी अनन्य भाव से मुझे भजता है, तो उसे साधु (सज्जन) ही मानना चाहिए; क्योंकि उसने निश्चय तो सही कर लिया है।

सरल व्याख्या:
यहाँ भगवान की अपार करुणा दिखाई देती है। वे कहते हैं कि किसी का अतीत कितना भी बुरा क्यों न हो, अगर आज उसने सच्चा निश्चय कर लिया है कि "मुझे केवल ईश्वर की ओर चलना है", तो वह पवित्र हो चुका है। उसका 'निश्चय' ही उसकी सबसे बड़ी पूंजी है और वहीं से उसके सुधार की यात्रा शुरू हो जाती है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... परमात्मा की भक्ति का द्वार हर किसी के लिए खुला है, बशर्ते संकल्प दृढ़ और सच्चा हो।

श्लोक संख्या: **9.31**

> क्षिप्रं भवति धर्मात्मा शश्वच्छान्तिं निगच्छति |
>
> कौन्तेय प्रतिजानीहि न मे भक्तः प्रणश्यति || **31** ||

हिन्दी अनुवाद:
वह शीघ्र ही धर्मात्मा हो जाता है और सदा रहने वाली परम शान्ति को प्राप्त होता है। हे कुन्तीपुत्र! तू निश्चयपूर्वक सत्य जान कि मेरा भक्त कभी नष्ट नहीं होता।

सरल व्याख्या:
भगवान अर्जुन को आश्वस्त करते हैं कि जैसे ही कोई अपना मन पूरी तरह ईश्वर को अर्पित करता है, उसके भीतर के विकार मिटने लगते हैं और वह धर्म के मार्ग पर दृढ़ हो जाता है। भगवान यहाँ एक महान प्रतिज्ञा (गारंटी) लेते हैं कि जो एक बार उनकी शरण में आ गया, उसका पतन कभी नहीं हो सकता; वे स्वयं उसकी रक्षा करते हैं।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... ईश्वर का प्रेम और शरण मनुष्य के चरित्र को बदल देते हैं और उसे पूर्ण सुरक्षा प्रदान करते हैं।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: **9.32**

> मां हि पार्थ व्यपाश्रित्य येऽपि स्युः पापयोनयः |
>
> स्त्रियो वैश्यास्तथा शूद्रास्तेऽपि यान्ति परां गतिम् || **32** ||

हिन्दी अनुवाद:
हे पार्थ! जो लोग नीच योनि वाले हों या स्त्रियाँ, वैश्य और शूद्र—कोई भी क्यों न हों, वे भी मेरी शरण होकर परम गति (मोक्ष) को ही प्राप्त होते हैं।

सरल व्याख्या:
परमात्मा के दरबार में जाति, लिंग या सामाजिक स्तर का कोई भेदभाव नहीं है। 'पापयोनि' का अर्थ यहाँ उन संस्कारों से है जो जीव को तामसिक प्रवृत्तियों में बाँधे रखते हैं। भगवान स्पष्ट करते हैं कि भक्ति का मार्ग सबके लिए समान रूप से खुला है। जो भी अनन्य भाव से शरण लेगा, उसे वही सर्वोच्च पद मिलेगा जो किसी ऋषि या मुनि को मिलता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... अध्यात्म में पात्रता केवल 'भाव' और 'समर्पण' से तय होती है, बाहरी स्थिति से नहीं।

श्लोक संख्या: 9.33

> किं पुनर्ब्राह्मणाः पुण्या भक्ता राजर्षयस्तथा |
>
> अनित्यमसुखं लोकमिमं प्राप्य भजस्व माम् || 33 ||

हिन्दी अनुवाद:
फिर जो पुण्यशील ब्राह्मण और भक्त राजर्षि (ऋषि तुल्य राजा) हैं, उनके लिए तो कहना ही क्या! इसलिए इस अनित्य (क्षणभंगुर) और सुख रहित संसार को प्राप्त होकर तू मेरा ही भजन कर।

सरल व्याख्या:
भगवान कहते हैं कि जब साधारण लोग भी भक्ति से तर जाते हैं, तो जो पहले से ही सात्विक और भक्त हृदय हैं, उनकी मुक्ति में तो कोई संशय ही नहीं है। यहाँ वे संसार की कड़वी सच्चाई भी बताते हैं—यह जगत 'अनित्य' (जल्दी खत्म होने वाला) और 'असुख' (दुखों का घर) है। इसलिए बिना समय गंवाए केवल परमात्मा की भक्ति में लग जाना चाहिए।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... संसार की नश्वरता को पहचान कर प्रभु की भक्ति में लग जाना ही बुद्धिमानी है।

Satyaanubhuti Ashram

श्लोक संख्या: 9.34

> मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु |
>
> मामेवैष्यसि युक्त्वैवमात्मानं मत्परायणः || 34 ||

हिन्दी अनुवाद:
मुझमें मन वाला हो, मेरा भक्त बन, मेरा पूजन करने वाला हो और मुझको ही नमस्कार कर। इस प्रकार अपने आप को मुझमें लगाकर और मेरे ही परायण होकर तू मुझको ही प्राप्त होगा।

सरल व्याख्या:
अध्याय के अंत में भगवान चार महत्वपूर्ण सूत्र देते हैं: 1. मन को प्रभु में लगाना, 2. उनसे प्रेम करना (भक्त बनना), 3. हर कर्म को पूजा मानना, और 4. अहंकार छोड़कर समर्पण (नमस्कार) करना। जब साधक का पूरा अस्तित्व इस प्रकार ईश्वरमय हो जाता है, तब वह अंततः परमात्मा के स्वरूप में ही विलीन हो जाता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... मन, बुद्धि और कर्म का पूर्ण समर्पण ही परमात्मा से एकाकार होने का निश्चित मार्ग है।

॥ इति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृष्णार्जुनसंवादे राजविद्याराजगुह्ययोगो नाम नवमोऽध्यायः ॥

Satyaanubhuti Ashram